सम्यक्त्व
जयंति
विशेषांक

वार्षिक सदस्यता शुल्क - रु. २५/-

MARCH - 2026

स्वानुभूतिप्रकाश

प्रकाशक :
श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट
भावनगर - ३६४ ००१.

पूज्य बहिनश्रीको ९४वीं (१३–३–२६) सम्यक्त्व जयंती दिन पर कोटि कोटि वंदन

सम्यक्दृष्टिका स्वरूप क्या? पूज्य बहिनश्री (चंपाबहिन)का सम्यक्त्वदिन आ रहा है। (सम्यक्जयंती) है वह गुणोंका बहुमान है, व्यक्तिका बहुमान नहीं है। वास्तवमें इसमें गुणोंका बहुमान है। जो एक क्षण अनन्त भवका क्षय करती है, अनन्त भवोंका छेद करती है.. कुल्हाडीसे जैसे मूलसे उखाड़ देती है, ऐसे भवरूपी वृक्ष पर कुल्हाडीका प्रचंड प्रहार है। इस एक क्षणका अनुभव बहुत महान चीज़ है, यह अवगत कराने हेतु इसकी महानता यहाँ व्यक्त करते हैं। वह ऐसे कि, क्षणमें केवलज्ञान प्रगट करनेका सामर्थ्य प्रगट किया। कितने रस समेत यह आत्मानुभव हुआ होगा! यह वहाँ तक पहुँचे बिना समझमें आना मुश्किल है। कितने रस सहित इसका अवतरण होता है कि, जब भगवानआत्माका जैसे जन्म हुआ हो। वास्तवमें तो ज्ञानियोंकी जन्मजयंती यह है!! इसके अलावा जो देहकी जन्मजयंती, देहका जन्म हुआ है सो तो एक शरीरसे संबंध रखनेवाली बात है। जिस संबंधको तो ज्ञानी छोड़नेवाले हैं। उसकी इतनी कीमत नहीं है। वास्तवमें तो ज्ञानीके रूपमें जन्म तो इस दिन हुआ है, यह उससे बढ़कर जन्मजयंती है। हकीकतमें दो जन्मको लेवे तो – एक आत्माका जन्म ... (वैसे) आत्मा अविनाशी है परन्तु यहाँ आत्मा आत्माके रूपमें अनुभवमें आया तब वास्तवमें आत्मारूप हुआ, तब परमात्मा हुआ उसवक्त! अतः वास्तवमें यह सच्ची जन्मजयंती है। (देहवाली) चाहे मनाये या न मनाये परन्तु यह (सम्यक्जयंती) तो मनानी ही चाहिये – ऐसा है। क्योंकि इसका महत्त्व उससे अधिक है। हालाँकि बाह्यदृष्टिवानोंको बाह्य प्रसंगकी महिमा अधिक रहती है इसलिए देहके जन्मदिनको मुख्य करते हैं। जबकि ऐसा जन्मदिन तो सभी प्राणियोंका आता है। शरीर–देहका जन्म तो सर्व प्राणियोंके लिए सामान्यसा है। परन्तु आत्माका सम्यक्त्वरूप जन्म होना सो तो करोड़ों–अरबोंमें किसी एकको होता है। असाधारण बात है। कितना असाधारण है कि, करोड़ों–अरबोंमें... अरबों मनुष्योंमें, जैसे वर्तमानमें विश्वकी आबादी ४ अरब जितनी है, इसमें कोई एक होता है। यह इसकी असाधारणता है। सो तो संख्या अपेक्षा असाधारण बात हुई। परन्तु यहाँ तो केवलज्ञान प्रगट करनेकी लब्धि प्रगट हो गई वह भी एक असाधारण–सी बात है।

(पूज्य बहिनश्रीकी सम्यक्जयंती पर पूज्य भाईश्री शशीभाईके हृदयोद्गार श्री 'परमागमसार' प्रवचन नं–७८ में से)

परम पूज्य भाईश्री शशीभाईको
उनकी सम्यक्त्व जयंती फाल्गुन कृष्णा १३ (१७–३–२६) के पावन दिन पर कोटि कोटि वंदन

स्वानुभूतिप्रकाश

वीर संवत्-२५५२, अंक-३३९, वर्ष-२८, मार्च-२०२६

कहानरत्न किरणें!!

- अध्यात्म युगसृष्टा
पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी
('परमागमसार' में से साभार उद्धृत)

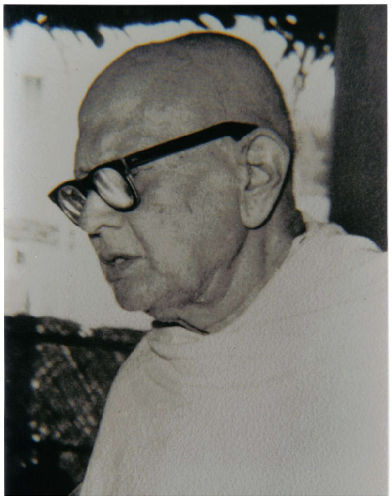

परसत्तावाले तत्त्वोंके ग्रहणका अभिमान, पर सत्तावाले तत्त्वोंके त्यागका अभिमान - यह अभिमान ही मिथ्यात्व है ; और वह सात व्यसनके पापसे भी भयंकर पाप है। ३१२

*

यह चैतन्यतत्त्व तो कोई अगम्य वस्तु है। वह बाह्य वैराग्यसे अथवा ज्ञानके क्षयोपशमसे मिलनेवाली चीज नहीं। अन्तरमें अव्यक्त होने पर भी प्रकट अचिंत्य वस्तु विराजमान है। उसके माहात्म्य-प्रति उपयोग जाए तब वह गम्य हो और जन्म-मरण टले - ऐसी यह वस्तु है। ३१३

*

जिसने एक बार प्रसन्न चित्तसे चैतन्यस्वभाव लक्ष्यगत किया, वह अवश्य ही निर्वाणका पात्र है। जिस पुरुषको निश्चयका पक्ष हुआ, उसको भले ही अभी अनुभव न हो, पर उसका वीर्य चैतन्यस्वभावकी ओर ढ़ल रहा है । यही स्वभाव है... यही स्वभाव है - ऐसी स्वभाव-सन्मुखता में ही जोर होनेसे वह अवश्य अनुभव कर केवलज्ञान पाएगा ही। ३१४

*

सुनते समय इसे आत्माका स्वरूप स्पष्ट लगता है, फिर भी इसका भ्रमजाल बना रहता है- इसका कारण यह है कि उसने ज्ञानके पायेको गहरा रोपा ही नहीं। ३१५

*

वर्तमानमें लेशमात्र भी प्रतिकूलता आए तो इससे सहन नहीं होती , परन्तु भविष्यमें आनेवाली अनन्त प्रतिकूलताओंके कारणरूप भावोंसे छूटनेकी इसे दरकार ही नहीं। ३१६

*

मूल चीज़ - ध्रुव वस्तु - इतनी सूक्ष्म है कि यह सूक्ष्मवस्तु हाथमें (अनुभवमें) आए तो बस! अमृतकी वर्षा ही वर्षा हुयी। ३१७

*

स्मशानमें फूले पड़े मुर्दोको खानेमें काले कौओंको मजा आता है। ऐसे ही यह हृष्टपुष्ट दिखता शरीर फूले-मुर्दे समान है, जो उसमें सुख मानते हैं, वे सभी काले कौओं समान हैं। ३१८

*

हे नाथ! चक्रवर्तीकी अवज्ञा भले ही हो जाए, पर आपके 'दर्शन'की अवज्ञा संभव ही नहीं। सर्वज्ञके ज्ञानसे अन्यथा परिणमित होने में कोई द्रव्य समर्थ नहीं। ३१९

*

शरीरकी क्रियासे और रागकी क्रियासे आत्माको पहचानना तो आत्माका अपमान है। ३२०

*

कर्मसे विकार होता है - जिन्होंने ऐसा माना, अरे!! उन्होंने तो आत्माका खून कर दिया। ३२१

*

जिसके ज्ञानमें तीनकाल और तीनलोकको जाननेवाले भगवान बैठे हों उसके भव होता ही नहीं, क्योंकि उसका ज्ञान सर्वज्ञस्वभावमें ढला है। ३२२

*

जीव लकड़ीका, लोहेका, अग्निका, जलका, बिजलीके स्वभावका विश्वास करता है, दवाकी गोलीका विश्वास करता है; यद्यपि इनसे परमें कुछ भी होनेवाला नहीं है, फिरभी जीव इनका विश्वास करता है। तो जिसमें आश्चर्यजनक एक ज्ञानशक्ति है, ऐसी ऐसी अनंत शक्तियोंमें व्याप्त भगवान आत्मा अचिन्त्य शक्तिमय और सामर्थ्यवान है - इसका भरोसा करे तो भवभ्रमण छूट जाए। ३२३

*

हम सर्वज्ञ हैं और तेरे गर्भमें भी सर्वज्ञ-पद विद्यमान है । स्वभावमें विद्यमान सर्वज्ञपदका आदर हुआ, उसमें अनन्त सर्वज्ञोंका आदर हो गया - ऐसा सर्वज्ञ कहते हैं। ३२४

*

भगवान जिसके हृदयमें बिराजते हैं, उसका चैतन्यशरीर राग-द्वेष रूपी जंगसे रहित हो जाता है। ३२५

*

बाल चुरानेकी तो क्या बात! पर यह तो परमाणुको चुरानेकी बात है। परमाणु भी क्या, पर उसकी अनन्त पर्यायोंको चुरानेकी बात है। एक पर्यायको दूसरी पर्यायकी सहायता नहीं है। आत्माके अनन्तगुणोंकी पर्यायमें एक पर्यायको दूसरी पर्याय सहायक नहीं है। पर्याय पर्यायकी योग्यतासे षट्कारकसे स्वतंत्र परिणमित होती है। अहो! यह तो जैन-दर्शनके हार्दकी-स्वतंत्रताकी मूल बात है। ३२६

*

जैसे रागकी मन्दता मोक्षमार्ग नहीं, वैसे व्यवहार-सम्यग्दर्शन मोक्षमार्ग नहीं, या मोक्षका कारण नहीं; वैसै ही उनके साथ प्रवर्तित परसत्तावलम्बी ज्ञान भी न तो मोक्षमार्ग है और न ही मोक्षका कारण। स्वसत्ताको अनुभवमें लेनेकी योग्यतावाला ज्ञान ही मोक्षका कारण है। ज्ञानानुभूति...आत्मानुभूति ...यही मोक्षका कारण है। ३२७

*

पर्यायमे, इसके स्वकालमें ही मोक्ष होता है - जल्दी या देरसे नहीं हो सकता - ऐसा निर्णय करने लगे तब दृष्टि ध्रुव पर ही जाती है और

इसीमें स्वभाव सन्मुख होनेका अनन्त पुरुषार्थ होता है और तभी पर्यायके स्वकालका वास्तविक ज्ञान होता है। जिसको आत्मकी श्रद्धा और ज्ञान सम्यक् हुए उसका कार्य तो हो ही रहा है, फिर जल्दी या देरका प्रश्न ही कहाँ रहा? ३२८

*

हे प्रभु! आपने चैतन्यका अनन्त भंडार खोल दिया है। तो हे प्रभु! अब ऐसा कौन होगा जो तिनके-समान चक्रवर्तिके राज्यको छोड़कर, चैतन्यरूपी खजानेको खोलने न निकल पड़े? ३२९

*

यह आत्मा – यही जिनवर है – यही तीर्थंकर है। अनादि कालसे जिनवर है। अहा! अनन्त केवलज्ञानकी बेल है। निज आत्मा ही अमृतका कुम्भ है – अमृतकी बेल है; इसीमें एकाग्र होनेसे पर्यायमें जिनवरके दर्शन होते हैं। परमात्मा प्रकट होते हैं, उसीको सम्यग्दर्शन कहते हैं। ३३०

*

भगवान सर्वज्ञ देव ऐसा कहतै हैं कि आत्मामें शरीर, संसार या रागादि हैं ही नहीं – सर्वप्रथम ऐसा निर्णय कर, आत्माका अनुभव कर ले। इसके बजाय जो ऐसा मानते हैं कि प्रथम शुभ क्रिया करने से, कषाय-मन्द करने से, आत्मा हल्का हो तब आत्माका अनुभव होता है , वे जीव देव-शास्त्र-गुरुके कथनका अनादार करते हैं। ३३१

*

निर्मल-पर्याय और त्रिकाली-द्रव्यका ज्ञान और अनुभव होने पर दृष्टिका आसन तो अव्यक्त पर है, व्यक्तके प्रति वह उदासीन ही है। ३३२

*

भगवान! तूँ तो गुणोंका गोदाम है, पुण्य-पापके भावोंका गोदाम नहीं। भगवान आत्मा ज्ञायकभावरूप है और शुभाशुभ भाव अचेतन है। यदि ज्ञायकभाव शुभाशुभ रूप हो तो, जो चेतन है, वह अचेतन हो जाए। 'जाणक' – 'जाणक' भाव वह जड़से शुभाशुभ भावोंरूप हो तो, अचेतन हो जाए। अतः ज्ञायक तो ज्ञायक रूप ही रहता है; वही सम्यग्दर्शनका विषय है। ३३३

*

स्व-पर-प्रकाशका पुंज प्रभु तो शुद्ध ही है, पर जो रागसे भिन्न होकर उसकी उपासना करे- उसीके लिए वह शुद्ध है। जिसको समस्त पर द्रव्यसे भिन्न होकर स्वमें एकाग्रता करते हुए शुद्धता प्रकट होती है उसके लिए वह शुद्ध है । रागादि-विकल्प रूप नहीं हुआ है अतः रागादिसे भिन्न होकर ज्ञायककी उपासना करने पर जिसको पर्यायमें शुद्धताका नमूना हुआ है उसके लिए वह शुद्ध है – ऐसा प्रतीतिमें आता है। वह शुद्ध है ऐसा विकल्पवालोंको (विकल्पकी एकतावालोंको) प्रतीतिमें नहीं आता। ३३४

*

जिसकी ज्ञानधारामें ज्ञायकका ज्ञान हुआ है; उसे रागादि परज्ञेयोंका ज्ञान उन ज्ञेयोंके कारणसे होता है – ज्ञानमें ऐसी पराधीनता नहीं है । शुभाशुभसे पृथक् होकर चैतन्यकी दृष्टि हुयी और ज्ञान-पर्यायमें स्व और परका ज्ञान हुआ, वह पर-सम्बन्धी ज्ञान पर-ज्ञेयके होनेके कारण हुआ- ऐसा नहीं है। ज्ञानके स्व-पर-प्रकाशक धर्मके कारण परका ज्ञान हुआ है। इसीलिए राग और ज्ञेयको जाननेवाला ज्ञान, ज्ञेयकृत है – ऐसा नहीं; परन्तु वह ज्ञानकृत ज्ञान है। ३३५

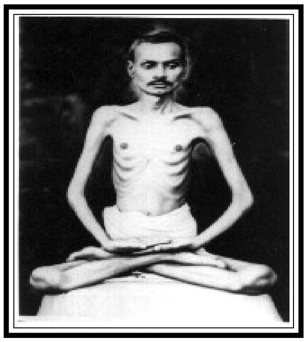

- परम कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजी राजहृदय !!

पत्रांक - ३९६

बंबई, श्रावण वदी, १९४८

ॐ

अन-अवकाश आत्मस्वरूप रहता है; जिसमें प्रारब्धोदयके सिवाय दूसरे कोई अवकाश-योग नहीं है।

उस उदयमें क्वचित् परमार्थभाषा कहनेका योग उदयमें आता है, क्वचित् परमार्थभाषा लिखनेका योग उदयमें आता है, और क्वचित् परमार्थभाषा समझानेका योग उदयमें आता है। अभी तो वैश्यदशाका योग विशेषरूपसे उदयमें रहता है; और जो कुछ उदयमें नहीं आता उसे कर सकनेकी अभी तो असमर्थता है।

जीवितव्यको मात्र उदयाधीन करनेसे, होनेसे विषमता मिटी है। आपके प्रति, अपने प्रति, अन्यके प्रति किसी प्रकारका वैभाविक भाव प्रायः उदयको प्राप्त नहीं होता; और इसी कारणसे पत्रादि कार्य करनेरूप परमार्थभाषा-योगसे अवकाश प्राप्त नहीं है ऐसा लिखा है, वह वैसा ही है।

पूर्वोपार्जित स्वाभाविक उदयके अनुसार देहस्थिति है; आत्मरूपसे उसका अवकाश अत्यंताभावरूप है।

उस पुरुषके स्वरूपको जानकर उसकी भक्ति या सत्संगका महान फल है, जो मात्र चित्रपटके योगसे, ध्यानसे नहीं है।

जो उस पुरुषके स्वरूपको जानता है, उसे स्वाभाविक अत्यंत शुद्ध आत्मस्वरूप प्रगट होता है। उसके प्रगट होनेका कारण उस पुरुषको जानकर सर्व प्रकारकी संसारकामनाका परित्याग करके-असंसार-परित्यागरूप करके-शुद्ध भक्तिसे वह पुरुषस्वरूप विचारने योग्य है। चित्रपटकी प्रतिमाके हृदय-दर्शनसे उपर्युक्त 'आत्मस्वरूपकी प्रगटता' रूप महान फल है, यह वाक्य निर्विसंवादी जानकर लिखा है।

'मन महिलानुं वहाला उपरे, बीजां काम करंत' इस पदके विस्तारवाले अर्थको आत्मपरिणामरूप करके उस प्रेमभक्तिको सत्पुरुषमें अत्यंतरूपसे करना योग्य है, ऐसा सब तीर्थंकरोंने कहा है, वर्तमानमें कहते हैं और भविष्यमें भी ऐसा ही कहेंगे।

उस पुरुषसे प्राप्त हुई उसकी आत्मपद्धतिसूचक भाषामें जिसका विचारज्ञान अक्षेपक हुआ है, ऐसा पुरुष, वह उस पुरुषको आत्मकल्याणका कारण समझकर, वह श्रुत (श्रवण) धर्ममें मन (आत्मा) को धारण (उस रूपसे परिणाम) करता है। वह परिणाम कैसा करना योग्य है? 'मन महिलानुं रे वहाला उपरे,

(अनुसंधान पृष्ठ संख्या १३ पर..)

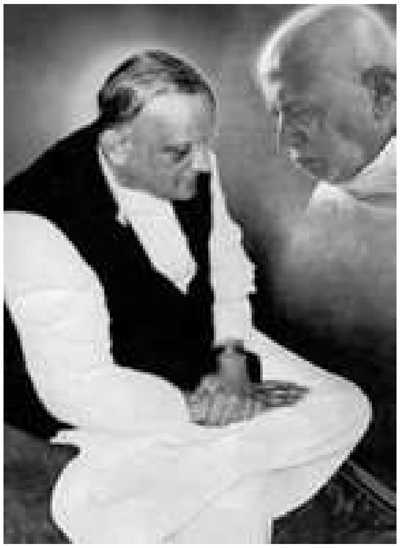

'आत्माकी रुचि'

– 'द्रव्यदृष्टि प्रकाश' – पूज्य निहालचंद्रजी सोगानी

(आत्माके लिए:) **रुचिकी आवश्यकता चाहिए। दरकार होनी चाहिए।** (विकल्पोंसे) **थकावट होनी चाहिए। तीव्र प्यास (तालवेली) लगे तो ढूँढ़े ही। ८५.**

✻

प्रश्न :– रुचि बढ़ते-बढ़ते वस्तुकी महत्ता बढ़ती जाती है और सुगमता भी ज़्यादा भासती है?

उत्तर :– रुचि बढ़ती है, ऐसे (पर्यायके) लक्ष्यमें भी पर्यायकी महत्ता होती है, उसमें (पर्यायमें) **'मैं-पना' (अहम्पना) दिखता है तो त्रिकालीमें नहीं जम सकते। – यह तो विकल्पवाली रुचि है। 'मैं तो परिणाम मात्रसे भिन्न हूँ' – ऐसे त्रिकालीका अनुभव होना, वो ही अभेदकी रुचि है। ८७.**

✻

प्रश्न : रुचि क्यों नहीं होती?

उत्तर : ज़रूरत दिखे तो अंदरमें आए बिना रहे ही नहीं। सुनते हैं (उसमें) प्रसन्नता आदि होती है, लेकिन सुखकी ज़रूरत हो तो अंदर आवे। ज़रूरत न हो तो वहाँ (प्रसन्नता आदिमें) **ही ठीक माने; लाभ है, नुकसान तो नहीं न!** (-ऐसा भाव रह जाता है।) **११७.**

✻

यथार्थ रुचि हो तो काल लगे ही नहीं, रात-दिन, खाते-पीते-सोते उसके ही पीछे पड़े। २३९.

✻

जितनी धगश उग्र... उतनी जल्दी कार्य होता है। ३११.

✻

(स्वरूपकी) **ऐसी रुचि होनी चाहिए कि उसके बिना एक क्षण भी चैन न पड़े। ३३१.**

✻

असलमें तीव्र रुचि हो तो त्रिकालीदलमें ही जम जाये; इधर-उधरकी जँचे ही नहीं, (व्यवहारके विकल्पमें रुके ही नहीं,) **योग्यतापर छोड़ देवे, वहाँ ज़ोर** (पुरुषार्थ) **रहे ही नहीं; दृष्टिके विषयमें ही ज़ोर रहे।** (इधर-उधरका विकल्प रहा करता है, वह स्वरूपकी अरुचिके परिणामका द्योतक है। स्वरूपकी तीव्र रुचिमें अन्य विकल्प नहीं रुचते।) **४१०.**

आत्माका परिचयी हो !!

- सौम्यमूर्ति पूज्य भाईश्री शशीभाई

आत्माके स्वभावकी पहचान करनेके लिये आत्माका परिचयी होना। बस! कृपालुदेवने लिखा है कि, आत्माको पहचानना हो तो आत्माका परिचयी होना। अब, आत्माका परिचय कैसे करे? कि, आत्माके जो भी भाव होते हैं सारे अनुभवगोचर हों ऐसे भाव हैं। क्योंकि हमारी पर्यायमें होते हैं। उस अनुभवका परिचय करते रहें। उसमें से स्वभावका भी परिचय होगा और विभावका भी परिचय होकर दोनोंकी भिन्न-भिन्न जातिकी पहचान होगी। इसतरह अवलोकनमें से भेदज्ञानकी उत्पत्ति होगी। और वह भेदज्ञान ही अनुभवका कारण होगा।

आत्माका परिचय साधनेके लिये आत्मामें उत्पन्न हो रहे अनेक प्रकारके भावोंके अनुभवका अवलोकन करना चाहिये। अब देखा जाये तो दो प्रकारके भाव प्रत्येक आत्माके भीतर चल रहे हैं। एक की है स्वभावजाति और दूसरेकी विभावजाति। स्वभाव एकरूप होनेसे इसके परिणाम एकसमान हैं। विभाव अनेकरूप होनेसे विभाविक परिणाम अनेकविध और विधविधरूप होते हैं - परन्तु इनकी जाति एक है। विभावके परिणाम अनेकरूप होनेपर भी इनकी जाति एक है। परखका जातिके साथ सम्बन्ध है। जातिकी पहचान हो तो स्वभाव जातिसे आत्माकी पहचान होती है। आत्माकी पहचान होनेपर आत्मामें कैसे-कैसे दिव्यगुण हैं इसकी परख आ जाती है। और इसकी कीमत आती है, इसकी महिमा आती है और महिमा अनुभवको ले आती है। और इसतरह बार-बार अंतरमें विचार करें, 'अंतर'में शब्दप्रयोग किया है। बारम्बार विचार करें।

वरना कोई कहेगा हम तो बहुत विचार करते हैं। इतने सालसे सोनगढ़में रहकर विचार कर रहे हैं। - ऐसा कहेगा। तो कहते हैं सिर्फ ऐसे नहीं। अंतरमें विचार करें। यहाँ 'अंतरमें' ऐसे शब्दप्रयोगमें वह अंतर अवलोकनका विषय है। अपने भावोंका अवलोकन करें। *'...तो स्वभावकी पहिचान हो'* तब तो स्वभावको पहचाने *'बाहरका यह सब रूखा (नीरस) है, उसमें कहीं संतोष या शांति नहीं है।'* देखो! यह ज्ञानीकी नज़र है। संसारी जीवोंको बाहरमें सब हराभरा लगता है। बिलकुल आम आदमी भी जब घर लौटे तब उसे सब भरा-भरा लगता है जैसे यह मेरा कुटुम्ब, यह मेरा परिवार, ये सुविधाएँ ये सब मेरा अच्छी तरह जमा हुआ है। अब जब जैसी ज़रूरत होगी इसके मुताबिक़ सुधार करते जायेंगे लेकिन सब सुहाना और सुकून भरा लगता है। जबकि ज्ञानीकी नज़रमें सब रूखा लगता है उन्हें। सुखका अभाव हो वह सब रूखा ही लगे न! ऐसा कहते हैं।

'उसमें कहीं संतोष या शांति नहीं है।' लोग कृत्रिम आनन्द कैसे-कैसे बात कर-करके लेते हैं इसे देखे तो जैसे हम लोग वहाँ गये थे तो वहाँ क्या खाना मिलता था!! माथेरानकी हॉटलमें या

कुलु मनालीकी हॉटलमें, क्या वहाँ मज़ा था!! वास्तवमें बातमें कोई दम नहीं होता। परन्तु कृत्रिमरूपसे बढ़ा-बढ़ाकर खुशी व्यक्त कर-करके उसमें आनन्द मानते हैं। वास्तवमें कोई आनन्द नहीं होता परन्तु क्या करें? करें भी क्या? या कोई जगह दावत पर गये वहाँ क्या कढ़ी बनायी थी!! आहा.. ऐसा कहेगा कभी! लेकिन अब उसमें है क्या? अच्छा है कि बहुत ज्यादा नहीं खा ली वरना उल्टी हो जाती। क्या होता? vomit हो जाती। फिर भी तारीफ तो इतनी करेगा कि क्या कहे! इसे अनुभवप्रकाशमें श्री दीपचन्दजी ऐसा कहते हैं कि जीव झूठा आनन्द मना रहा है। कैसा? क्योंकि वहाँ वास्तवमें आनंद था नहीं। है भी नहीं। लेकिन आगेसे कल्पना जो कर रखी हो। जबकि वास्तवमें कुछ आनन्दकी प्राप्ति हुई न हो फिर दूसरेके आगे दिखावा करता है। इतना वहाँ मज़ा आया क्योंकि हमारे वहाँ ऐसा खाना, इतना धूमना-फिरना! अच्छे कपड़े पहननेसे आनन्द आयेगा कि नहीं? बताईये। किस परमाणुमें से आनन्द आता है? कपड़ेके किस परमाणुमें से आनन्द आता है? और वाकईमें उसमें से आनन्द आता हो तो दूसरे दिन उसे डंडा मारकर धुलाई करते क्या?

मुमुक्षु :- भाईश्री! आपने ऐसी-ऐसी बात करी तो उलटी नीरसता आने लगी। आप इसतरहसे बात करते हो कि नीरसता ही आ जाये! ये सारी बातें याद आने लगे तो आनन्द गायब हो जाता है!

पूज्य भाईश्री :- वैसे भी था कहाँ?

मुमुक्षु :- पहले तो इस कल्पनामें...इसमें तो बेचारा उसमें भी उठ जायेगा!

पूज्य भाईश्री :- यदि कल्पनासे उपर उठेंगे तो ही यह रास्ता दिखेगा। जबतक कल्पनामें जकड़े हुए रहोगे तबतक यह रास्ता मिलनेवाला नहीं है। जिन परमाणुओंसे आनन्दकी कल्पना की थी, दूसरे ही दिन उसे डिटर्जेंट और सोड़ाके पानीमें डालकर मार-मारकर धुलाई कर देते हैं। तो क्या उसमें आनन्द था? कल्पना करी थी और क्या? इन दिनों युवावर्गमें चित्र-विचित्र ड्रेस बहुत पहने जाते हैं। आप लोग देखते होंगे? हमलोग, हमारी उम्रके लोग ऐसे चित्र-विचित्र ड्रेस नहीं पहनते, क्योंकि हमलोग उस उम्रसे गुज़र चुके। तो हमें नहीं लगता है कि इसने अजीब-सा दिखाव किया है। अजीब-सा दिखाव नहीं लगता? वैसे कोई अच्छे कपड़े पहनकर थोड़ा उछल-उछलकर खुश होता है तब ज्ञानीको लगता है इसने अजीब-सा भेष बनाया है। और ऐसे अजीब भेष बनानेमें इसने क्या आनन्द मान रखा है? जैसे बाहरमें ऐसे युवावर्गको देखें तब हमें कितना विचित्र लगता है!! ऐसा ज्ञानीकी नज़रमें लगता है। इसका कारण क्या है कि, ज्ञानी (समझते हैं कि) जो सादगीसे रहते हैं उन्हें उसमें आकुलता तो नहीं होती, जबकि ऐसा जीव कि जिसको, ऐसा चाहिये, वैसा चाहिये, ऐसा हो, ऐसा न हो, यह पसन्द है, यह नापसन्द है, यह अच्छा, यह बुरा ऐसा जिसको होता है उसको कितनी आकुलता रहती है - यह ज्ञानीको दिखता है। ज्ञानीकी दृष्टिमें उसकी आकुलता दिखाई देती है। उस जीवको भान नहीं होता कि मैं कितनी आकुलता भोग रहा हूँ परन्तु ज्ञानीको वह आकुलता दिखाई देती है।

इसविषयमें गुरुदेवश्री बहुत सुन्दर बात करते थे। जैसे कोई सेठ आदमी हो, अच्छे कपड़े और जूते वगैरह पहनकर अपनी चमचमाती गाड़ीमें बैठा हो। सब देखनेवालोंको ऐसा लगे कि देखिये! यह

आदमी कितना सुखी है! कितनी अच्छी luxurious गाड़ी है उसके पास और निकल पड़ा है उसमें बैठकर। परन्तु ज्ञानी इसे कैसे देखते हैं? कि, वह आदमी मोटरगाड़ीमें नहीं बैठा है वास्तवमें गाड़ी उसकी छाती पर बैठी है अभी तो!! क्योंकि यह गाड़ी मेरी ऐसा मानता हुआ उस गाड़ीको ठीकठाक रखनेके लिये वह क्या कुछ नहीं करता? कितनी आकुलता करता है यह ज्ञानी जानते हैं। (ज्ञानी) भले ही उसकी ऑफिसमें न जाते हों तो भी वे जानते हैं कि ये सारी सुविधाएँ बनाए रखनेके लिये उसे क्या कुछ नहीं करना पड़ता। इसलिये हकीकतमें आदमी गाड़ीमें नहीं बैठा, गाड़ीका भार उसके सिर पर है। इतनी उपाधिरूप बोझा लेकर वह फिरता है। 'मेरी गाड़ी' – माननेमें इतना बोझा है! इससे तो अच्छा, ये दस रुपये दिये और रिक्शामें सफ़र करके मुक्त! मुंबईमें जैसे न तो पार्किंगकी माथापच्ची न तो हवलदारकी कोई माथापच्ची। दस रुपयेका नोट फेंका और चल पड़े। कोई उपाधि रहती है? (वास्तवमें) उपाधिमें दुःख है, निरुपाधीमें सुख है यह बात समझमें आनी चाहिये। तात्पर्यं तो वही है। कितनी सुंदर बात ली है!

'बाहरका यह सब तो रूखा (नीरस) है,...' ये उनकी नज़र है। बाहरका सब रूखा लगता है उन्हें। *'...उसमें कहीं संतोष या शांति नहीं है। किन्तु एक चैतन्यतत्त्व ही ऐसा है कि जिसमें अनन्त शांति–'* अनन्त सबको लागू होगा। *'...सुख–आनन्द एवं अपूर्वता भरी हुई है।'* अन्यमतमें एक पद आता है। 'हरि नो मारग छे शुरानो, नहीं कायरनुं काम जोने... मांही पड्यां ते महासुख माणे, देखनहारा दाज़े जोने।' ऐसे करके बहुत बात लिखी है कविने। भीतर आत्मामें रहनेवाले सुखको भोगते हैं और तब दूसरेको ऐसा लगता है कि इनको तो कोई उपाधि नहीं! जबकि मैं तो जल रहा हूँ भीतरमें। इसतरह चैतन्यतत्त्व ही ऐसा है कि जिसमें अनन्त शांति, अनन्त सुख, अनन्त आनंद व अपूर्वता भरी है।

'–इसप्रकार आत्माको स्वभावसे पहिचानना।' आत्माका स्वभाव सुखस्वभाव है, शांत स्वभाव है, आनन्द स्वभाव है उसे पहिचानो। उसे परखो और पहचानो। स्वाध्याय–सत्संग ऐसे उद्देश्यपूर्वक करना है कि 'मैं अपने स्वरूपको कैसे पहचान लूँ?' अभी मैं अपने स्वरूपको पहचाननके लिये मुझे क्या करना चाहिये यह समझने बैठा हूँ। बादमें इस समझको लगानी है पहचाननेके कार्यमें।

'देव–गुरु स्वानुभव करके कह रहे हैं...' जिनेश्वरदेव और वीतरागी निर्ग्रंथगुरु हैं वे स्वानुभवपूर्वक कह रहे हैं *'कि जो अनन्तकालसे प्रगट नहीं हुआ ऐसा कोई अनुपम तत्त्व तुझमें (विद्यमान) है।–'* सुखसे भरा हुआ, आनंदसे भरा हुआ, जिसकी उपमा जगतमें किसीसे नहीं दे सकते ऐसा तुझमें भरा है। *'इस बातका स्वयं विचार करके...'* सुनी हुई बातका स्वयं अंतरमें विचार करके *'अपने स्वभावके साथ मिलान करे...'* लागू करके जाँच करे। सिर्फ ऊपर ऊपरसे सुनना नहीं है, सिर्फ विचार करे ऐसा भी नहीं परन्तु भीतरमें स्वभावके साथ मिलान करे।

'और निश्चित करे कि मेरा अपूर्वतत्त्व कोई निराला ही है...' स्वभाव तो बहुत गहराईका विषय है और गहराईमें जाये तब हस्तगत होनेवाला विषय है। परन्तु जिन–जिन भावोंकी बात चलती है उसमें विभावभावोंकी भी बात चलती है। और

अनुभवमें जो भाव आ रहे हैं इसकी बात चलती है जैसे कि तुझे क्रोध आनेपर ऐसा होगा, तुझे लोभ होने पर ऐसा होगा और मायाचारमें ऐसे-ऐसे परिणाम होंगे, मान चढ़ेगा तब ऐसे-ऐसे परिणाम होंगे। सारे के सारे अनुभवगोचर होनेवाले भाव हैं न? चारित्रमोहके भाव तो इतने स्थूल हैं जैसे क्रोध, मान, माया, लोभ तो जीवकी समझमें आते ही हैं।

अतः जिन-जिन भावोंकी चर्चा चले, जिन-जिन भावोंकी बात चले उसके साथ अपने भीतरमें चल रहे भावोंका मिलान करे तो उन-उन भावोंका भावभासन होगा, भावज्ञान होगा। भावभासन माने? भासन नाम ज्ञान। भासन और ज्ञानमें क्या अन्तर है यह देखे तो सिर्फ जानना हो उसे ज्ञान कहते हैं हमलोग जबकि ज्ञानमें feeling के साथ जानना हो उसे हम भासन कहते हैं। अब आपके भाव तो आपको अनुभवमें आ ही रहे हैं। जब तुझे क्रोध आता है तब आकुलता बढ़ती है तब तेरे क्रोधके चलते भावमें यदि तू आकुलताको देख पायेगा तभी क्रोधसे क्या दुःख है यह तुझे समझमें आयेगा। वरना क्रोध किये बिना नहीं चले ऐसा तेरा अभिप्राय तो आगेसे चला आता ही है। मैंने कोई फालतूमें क्रोध नहीं किया, इधर ज़रूरत थी क्रोध करनेकी इसलिये किया ऐसा कहेगा। या सामनेवालेने मुझे क्रोध करवाया तब तो मैंने क्रोध किया। ठीक!

मुमुक्षु :- बचाव करे...

पूज्य भाईश्री :- बचाव करके आरोप दूसरे पर डाल देगा लेकिन वास्तवमें वहाँ क्रोध करनेका खुदका अभिप्राय है। इसकी जगह जब अन्तर विचार, अन्तर अवलोकन करेगा तो ही समझमें आयेगा कि मैं मेरे अपराधके फलमें ही दुःखी होता हूँ। इसलिये यहाँ कहते हैं कि तू सुनी हुई बातका भीतरमें इसका मिलान करो। यहाँ स्वभावकी बात ली है तो मिलान करो अंतरमें। सभी भावोंका मिलान करो। जिस-जिस भावकी बात आये उसका मिलान करो। ऐसे मिलान करते-करते-करते स्वभाव क्या है इसकी परख आयेगी। इसका भावभासन होगा। तत्पश्चात सच्ची महिमा आयेगी। अभी तो ज्ञानीके, गुरुके कहे अनुसार तुझे करना होगा। बादमें पहचान हो जानेपर इसकी महिमा आयेगी।

ऐसा एक दृष्टांत है। एक मनुष्य मृत्युशय्या पर था। उसका एक इकलौता बेटा था। पीछे आर्थिक स्थिति थोड़ी कमज़ोर हो गई थी। पहले अच्छी थी पीछे बिगड़ गई थी। उसको लगा कि अब मैं तो मृत्युके समीप हूँ इसलिये अब वापिस कमाई करके यह बिगड़ी हुई स्थितिको ठीक कर लूँ, ऐसा तो सम्भव नहीं है। अभी बेटा उम्रमें छोटा है। उसको मुसीबत आयेगी ऐसी नौबत आ चुकी है। लेकिन थोड़ा विचिक्षण आदमी था। इसलिये उसने बेटेको कहा कि देख! अपनी आर्थिक स्थिति कमज़ोर हो चुकी है और मैं अब कुछ सुधार करनेके लिये सक्षम नहीं रहा, परन्तु ये जो बहुत मूल्यवान हीरे अपने पास रह गये हैं इसे अब तू घरमें मत रखना। मेरा फलाँ मित्र जो है इसके वहाँ तू रखकर आ जा। और सही वक्त पर वह तेरी सहायता करेगा। मेरा वह जो मित्र है वह सही वक्त पर तुझे सहायभूत होगा। अभी भी तू सिर्फ उसके पास ही जाना। उसके वहाँ ही तू सब सीख लेना। अपना हीरेका काम है, उसका भी हीरेका कारोबार है लेकिन तुझे अभी सब सीखना बाकी है इसलिये train-

ing भी तू उसके वहाँ ही लेना। और वह तुझे तनख़ा आदि जो उचित होगा वह सब तेरी ज़रूरत पूरी कर देगा। तुझे मुसीबतमें नहीं आने देगा लेकिन अब तू उसके वहाँ आना-जाना और सब सीखना शुरू कर दे।

पुत्रने वैसा किया और जौहरी बन गया अच्छी तरह हीरेकी पहचान करनेवाला। एक बार उसे लगा कि मेरे पिताश्रीने बहुत मूल्यवान रत्न, बहुत मूल्यवान हीरे जो इनको (मित्रको) सँभालने हेतु दिये थे उसे ज़रा देख तो लूँ क्योंकि अब तो मुझे हीरेकी परख है। हालाँकि इसका कोई मूल्य नहीं था। लेकिन उसवक्त मानसिक (आघात) न लगे इसलिये जाते समय विचिक्षणतासे यह प्रयोग किया था। उसके मित्रने क्या किया था, उन्हींके हाथों रखवा दिये थे कि जाओ बेंकके लॉकरमें रख दो। ज़रूरत पड़ने पर इसे निकालेंगे। अभी तू इसे मत देखना मुझे पूछे बगैर। अपनी ज्वाइंट साइन है। तू अभी छोटा है हमलोग साथमें लॉकर खोलेंगे। परन्तु अभी तुझे इसे खोलनेकी या उपयोग करनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं तेरी सारी जिम्मेदारी उठा लूँगा।

अब, जब खुदको लगा अब मैं तैयार हो गया हूँ, ज़रा देख लेना चाहिये। चलो हमलोग निकाल ले आते हैं। निकालकर देखा तो पता चला कि इसमें तो कुछ नहीं है। जब परखना सीख लिया तब पता चला कि इसकी हक़ीक़तमें कोई कीमत नहीं है। जब तक परखना न आता हो और बीचमें इसको बताया होता कि तेरे पिताजीने जो दिया है सो तो बेकारके हैं, सिर्फ कंकड़ हैं, पत्थर हैं। उसवक्त विश्वास रहता उसका? उसे तो यही लगता कि ये मूल्यवान चीज़ है और आप इसके लिये मना करते हो? कि इसमें कुछ नहीं है। फिर पता चला कि यह तो तुझे जौहरी बनानेकी बात थी। अब तो तू तैयार हो गया है तो अब तू ही देख ले न! तब उसे पता चल गया।

इसप्रकार आत्माकी पहचान बिना आत्माका मूल्य और आत्माकी महिमा नहीं आ सकती। ज्ञानियोंने जितना भी कुछ कहा है वह पहचान होनेके लिये कहा है। पहचान करनेकी practice खुदको करनी है। अतः खुद भीतरमें मिलान करे, और पहचानपूर्वक सुनिश्चित करे कि, *'मेरा अपूर्वतत्त्व कोई निराला ही है तथा परिणति अंतरमें जाये तो अनुभव हो सके ऐसा है।'* क्योंकि अनुभूतिस्वरूप ही है। आत्मा तो अनुभूतिस्वरूप है, उसका अनुभव हो सकता है।

'गुरुदेवकी वाणीके पीछे अपूर्वता थी।' देखिये! अब खुदको जो एहसास हुआ है इसकी बात करते हैं। *'गुरुदेवकी वाणीके पीछे अपूर्वता थी। वे आत्माकी अपूर्वता, आत्माके चमत्कार, आत्माकी महिमा बतलाते थे। -उस बातका स्वयं अंतरमें अपने स्वभावके साथ मिलान करके, मुझे दिखाई नहीं देता तथापि आत्मा महिमारूप है, ऐसे निश्चित करना।'* यह गुरु पर विश्वास हुआ परन्तु मिलान करना चालू रखना। सिर्फ सुनते रहना - ऐसे नहीं। आज हमने इतने घण्टें सुना- वैसे नहीं। अभी टेप लगाकर सुनते हैं वैसे नहीं। मिलान कहाँ तक किया यह देखो। *'स्वयं विचार करके तथा शास्त्र द्वारा, गुरुकी वाणी द्वारा एवं युक्तिसे...'* युक्तिसे मतलब मिलान करके। *'अंतर चैतन्यका स्वभाव पहिचानकर निश्चित करे।'* यूँ ही निश्चय कर ले वैसे नहीं। विचार करके नहीं परन्तु पहिचानपूर्वक निश्चय करे। *'जो स्वभाव हो*

वह अमर्यादित होता है;...' अग्निकी चिनगारीमें जलानेका स्वभाव है तो इसकी कोई मर्यादा नहीं होती। चाहे कितना भी जला दे।

'तथा जो आनंदको चाहता है उस तत्त्वमें अनन्त एवं अपूर्व आनंद भरा हुआ होना चाहिये; तथा आनंद किसी अन्यके आश्रयसे नहीं होता (अर्थात्) स्वयंसे होता है।' स्वाधीनरूपसे होता है। ऐसा होना चाहिये। अतः ऐसा **concept** होना चाहिये कि मुझे शाश्वत आनंद चाहिये, शाश्वत सुख चाहिये। इसलिये इसमें शाश्वत सुख होना चाहिये जो पराधीन नहीं होना चाहिये।

'-इसप्रकार अंतरमें स्वयं मिलान करके निश्चिति करे,...' मिलान करके नक्की करे। *'महिमा लाये तथा उस ओरका पुरुषार्थ करे...'* यदि मिलान करे और मिलान करके यथार्थ निश्चय करे तो महिमा आयेगी। और महिमा आयेगी तो उस दिशामें पुरुषार्थ उमड़ेगा। *'...वह आत्माका माहात्म्य लानेका उपाय है।'* प्रश्न तो ऐसा पूछा है कि आत्माकी महिमा कैसे आये? तो कहते हैं कि बिना पहचान महिमा नहीं आयेगी। जब पहचान होगी तब अपना साक्षात सिद्धपद स्वरूप है ऐसा अपना स्वरूप भासित होने लगेगा। और तब ही वास्तविक महिमा आयेगी और सारे जगतकी महिमा उसवक्त छूट जायेगी। जैसे मेरे स्वरूपके आगे किसीकी कोई महिमा नहीं है। इसप्रकार पहचानपूर्वक निश्चय करना, स्वभावकी पहचान करना और महिमा करना। - यह बात की है। यहाँ तक रखते हैं।

(श्री 'स्वानुभूति दर्शन', प्रश्न-११९, दि.२७-१२-१९९६, प्रवचन क्र.-४१२)

(पृष्ठ संख्या ०६से आगे...)

बीजां काम करंत' यह दृष्टांत देकर उसका समर्थन किया है।

घटित तो इस तरह होता है कि पुरुषके प्रति स्त्रीका काम्यप्रेम संसारके दूसरे भावोंकी अपेक्षा शिरोमणि है, तथापि उस प्रेमसे अनंतगुणविशिष्ट प्रेम, सत्पुरुषसे प्राप्त हुए आत्मरूप श्रुतधर्ममें करना योग्य है; परंतु उस प्रेमका स्वरूप जहाँ अदृष्टांतता-दृष्टान्ताभावको प्राप्त होता है, वहाँ बोधका अवकाश नहीं है ऐसा समझकर उस श्रुतधर्मके लिये भरतारके प्रति स्त्रीके काम्यप्रेमका परिसीमाभूत दृष्टांत दिया है। सिद्धांत वहाँ परिसीमाको प्राप्त नहीं होता। इसके आगे सिद्धांत वाणीके पीछेके परिणामको पाता हैं अर्थात् वाणीसे अतीत-परे हो जाता है और आत्मव्यक्तिसे ज्ञात होता है, ऐसा है।

*

आभार

'स्वानुभूतिप्रकाश' (मार्च-२०२६, हिन्दी एवं गुजराती) के इस अंककी समर्पणराशि

आगम, श्लोका, मोक्ष और वैदेही (मुंबई)

की ओरसे ट्रस्टको साभार प्राप्त हुई है।

अतएव यह पाठकोंको आत्मकल्याण हेतु भेजा जा रहा है।

पूज्य श्री निहालचंद्रजी सोगानी की ११५ वीं जन्मजयंती महोत्सव प्रसंग पर सुवर्णपुरी सोनगढ़ में धार्मिक कार्यक्रम

पूज्य गुरुदेवश्री के महापुराण के पात्र ऐसे पूज्य निहालचंद्रजी सोगानीजी की ११५ वीं जन्मजयंती उनकी साधनाभूमि सुवर्णपुरी में दि.२५–०४–२०२६ से दि.२७–०४–२०२६ त्रिदिवसीय धार्मिक कार्यक्रम सहित अत्यंत आनंद उल्लासपूर्वक मनाने का निश्चित किया गया है। यह धार्मिक कार्यक्रम सोनगढ़ स्थित 'गुरुगौरव' स्मारक में मनाया जायेगा।

इस प्रसंग पर प्रातः पूज्य बहिनश्री की तत्त्वचर्चा (आश्रम में), जिनदर्शन तथा पूजन जिनमंदिर में, पूज्य गुरुदेवश्री का सीडी प्रवचन स्वाध्याय मंदिर में, तत्पश्चात् पूज्य भाईश्री शशीभाईके 'द्रव्यदृष्टि प्रकाश' ग्रंथ पर 'गुरुगौरव' स्मारकमें प्रवचन, दोपहर में पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचन, बादमें पूज्य सोगानीजी का गुणानुवाद 'गुरुगौरव' में, रात्रि में पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन स्वाध्याय मंदिर में और 'गुरुगौरव' स्मारकमें भक्ति एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम सहित मनाया जायेगा।

दि.२७–०४–२०२६ पूज्य सोगानीजी के जन्मजयंती दिन पर पूज्य भाईश्री के प्रवचन के बाद जन्मवधामणा तथा भक्ति का कार्यक्रम रहेगा।

इस प्रसंग पर सभी मुमुक्षु भाई–बहनों को पधारने का हार्दिक निमंत्रण है।

आयोजक : श्री सत्सुख प्रभावक ट्रस्ट, भावनगर

सौम्यमूर्ति पूज्य भाईश्री शशीभाई के समाधिदिन (चैत्र सुदि ५) के उपलक्ष में तीन दिवसीय धार्मिक कार्यक्रम

१) चैत्र सुदि त्रीज, दि.२१–३–२०२६ से पांचम, दि.२३–३–२०२६

सुबह : ७.०० से ८.०० पू.भाईश्री ऑडियो प्रवचन
स्थल : 'ज्ञानमात्र' समाधि मंदिर, भावनगर
१०.०० से ११.३० मंडल विधान पूजन
स्थल : दिगंबर जैन मंदिर, जूनी माणेकवाड़ी, भावनगर

दोपहर : ४.३० से ५.३० पू.भाईश्री गुणानुवाद
स्थल : श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर

रात्रि : ८.०० से ९.०० पू.भाईश्री विडीयो प्रवचन
स्थल : श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर

२) चैत्र सुदि पांचम, समाधि दिन प्रातःकाल ४.०० से ४.३० वैराग्य भक्ति एवं श्रद्धांजली
स्थल : श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर

पूज्य भगवती बहिनश्री चंपाबेनकी निजानंदवेदन सम्बन्धित नोंध

आनंदका दिन

ई.स. १९३३
वांकानेर वि.सं.१९८९
(उम्र १९ वर्ष)
(शामको लगभग ३.३० बजे)

चैत्र (गु. फाल्गुन) कृष्णा १० को सोमवार दोपहर सामायिकमें, निजस्वरूप अनुभवमें आया। अनंतकालसे नहीं समझमें आया स्वरूप, समझमें आया। आनंदसागर उछल रहे थे। वह स्वरूप आश्चर्यकारी व अद्‌भुत है।

परम उपकारी परम प्रतापी सद्‌गुरुदेवको नमस्कार।

चैत्र (गुज. फाल्गुन) कृष्णा दसवींके मंगलकारी दिन हुई स्वानुभूति सम्बन्धी पूज्य बहिनश्रीकी नोंध

चैत्र (गु. फाल्गुन) कृष्णा दसवींका अपूर्व दिन

वांकानेर, सं. १९८९ (वैशाख मासमें लिखा गया)
(ई.स.१९३३; उम्र १९ वर्ष)

स्वस्वरूपका लक्ष्य आते, चैत्र (गुजराती फागुन) कृष्णा दशमी सोमवारको दोपहरमें, ज्ञाताधाराकी वृद्धि होने पर, उस स्वरूपका ध्यान होने पर, उसमें एकाग्र होने पर, उस स्वरूपमें वेग तीव्रतासे आकर उपयोग परलक्ष्यसे छूटकर, अपने स्वस्वरूपमें स्थिर होकर, चैतन्यभगवान उस स्वरूपका अनुभव करते थे। अपने निर्विकल्प सहज स्वरूपमें खेल रहे थे, रमण कर रहे थे। अनुपम और अद्‌भुत ऐसे आत्मद्रव्यकी महिमा कोई अपार है! चैतन्यदेव आनंदतरंगोंमें डोलते थे।

अहा! अनन्तकालसे छीपे हुए आत्मभगवान प्रकट हुए, उनका छिपा हुआ ऐसा अनुपम अमृतस्वाद वेदनमें आया, अनुभवमें आया।

हे श्री सद्‌गुरुदेव! वह आपका ही प्रताप है।

अपूर्व आत्मस्वरूप प्रकट हुआ, वह परमकृपाळु सद्‌गुरुदेवका ही प्रताप है।

भारतखँडमें अपूर्व मुक्तिमार्ग प्रकाशनेवाले परम उपकारी गुरुदेवको नमस्कार!

*

श्री महावीरभगवान जन्मकल्याणक एवं पूज्य गुरुदेवश्री संप्रदाय परिवर्तन दिन (चैत्र सुदि तेरस – ३०–०३–२६)

आज (महावीर भगवानका) जन्म कल्याणक दिन है। इसी दिन हमारे अनन्त उपकारी पूज्य गुरुदेवश्री (कानजीस्वामी) ने जाहिर परिवर्तन किया था। जबसे समयसार हाथ लगा था तबसे अंतरंग परिवर्तन तो हो चुका था। अभ्यंतर परिणामको बाह्यक्रियामें स्वतः कुछ समय लगता है। १९९१ चैत्र सुदि तेरसके दिन पूज्य गुरुदेवश्रीने जाहिर परिवर्तन किया और दिगम्बर आम्नायका स्वीकार किया। इसके पहले प्रयोजनभूत अध्ययन तो करीब–करीब सारा हो चुका था। वह इसलिये आवश्यक है कि, जैसे पहले कुछ जानते नहीं थे और यूँ ही समयसार मिला और स्वीकार कर लिया, ऐसे एक पक्षवाला प्रकार नहीं था। श्री भगवान महावीरस्वामीका शासन अभी प्रवर्तमान है और इनके शासनमें वर्तमानमें उनके द्वारा प्ररूपित उपदेशकी परम्परासे हमलोग लाभ ले रहे हैं। अतः उनका भी हम पर उपकार वर्तता है। भले ही वे प्रत्यक्ष नहीं हैं, वर्तमानमें वे सिद्धालयमें विराजमान हैं फिर भी उनकी देशना आचार्योंकी परंपरा द्वारा जो चली आ रही है जो गुरुदेवश्री पर्यंत हमें मिली, अतः भगवान हमारे उपकारी हैं। आजका दिन उस उपकारकी स्मृतिका दिन है। उन्होंने जिस मार्गको निरूपित किया और आत्मस्वरूपको बतलाकर उन्होंने जो शुद्धता प्रकट की, वह सब कुछ मंगल है, महिमा करने योग्य है। अतः हृदयसे उनकी महिमापूर्वक उनके उपकारको आजके दिन स्मरण करना चाहिये। पूज्य गुरुदेवश्रीने अगर इसतरह जाहिरमें परिवर्तन न किया होता तो शायद इतने

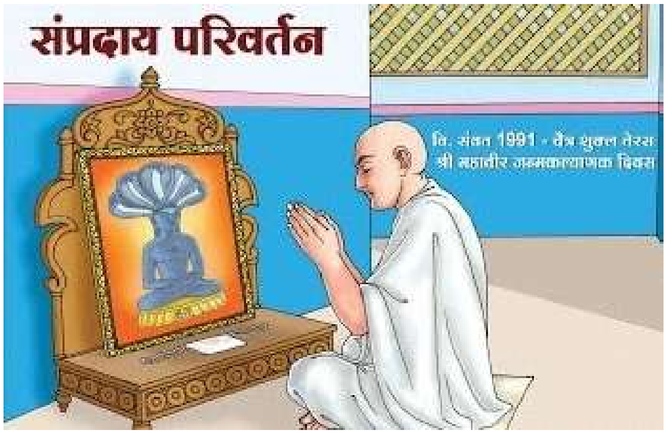

जीवोंका इस अलौकिक विषयके प्रति ध्यान नहीं जाता शायद इतने साहित्यकी प्रसिद्धि नहीं होती, इतने मंदिर नहीं बनते या जैसे कुंदकुंदाचार्यके विषयमें तत्पश्चात हुए मुनियोंने ऐसा लिखा – कहा है, ऐसे शिलालेख मिलते हैं कि, अगर कुंदकुंदाचार्यने महाविदेहकी यात्रा करनेके पश्चात् ऐसा उपदेश नहीं दिया होता तो – हम मुनियोंकी क्या हालत होती? ठीक इसीप्रकार यदि गुरुदेवश्रीका ऐसा उपदेश प्रसिद्ध न होता, मानो अन्य ज्ञानियोंकी भाँति वे भी गुप्त रह जाते तो हमारी आज क्या स्थिति होती यह कहना मुश्किल है। अनन्त भवभ्रमणमें हम परिभ्रमण करते आये हैं, ऐसे परिभ्रमणके दौरान सत्पुरुषका योग क्वचित् बनता है। जैसे अनन्तकालमें मनुष्यभव क्वचित् ही मिलता है, ऐसे क्वचित् मिलनेवाले अनेक मनुष्यभवमें- अनन्त मनुष्यभवमें ऐसे दुर्लभ सत्पुरुषका योग भी क्वचित्-क्वचित् होता है। इसका मूल्य बहुत बड़ा है। एकबार कोई मृत्युसे बचा ले, कॅन्सर-सा रोग मिटा दे तो मैं उसका गुलाम हो जाऊँ ऐसा कहेगा।

पीड़ासे चीखता हो ऐसी वेदनासे कोई बचा ले तो यूँ कहेगा कि, तुम यदि बचा लोगे तो सारी जिंदगी तुम्हारा गुलाम बनके रहूँगा। क्या कहेगा? कि, यदि इस पीड़ासे तुम बचाओगे तो पूरी जिंदगी तुम जो कहोगे वह करुँगा। तो यहाँ तो अनन्त जन्म-मरणसे बचानेवाले श्रीगुरुका मूल्य किन शब्दोंमें, किस Termमें हो सके? कहते हैं कि, इसकी कोई Terminology नहीं है। किस Term में हो ? कौन-सी शर्त रखी जाये? इसके लिये कोई अवकाश नहीं है। ऐसे पूज्य गुरुदेवश्रीके उपकारका भी आज स्मरण करने योग्य है।

(श्री 'परमागमसार' प्रवचन नं.-२९७में से)

✻

'स्वानुभूतिप्रकाश' (हिन्दी) के स्वामित्वका विवरण फोर्म नं.४, नियम नं. ८

पत्रका नाम	: 'स्वानुभूतिप्रकाश' (हिन्दी)
प्रकाशन स्थल	: श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट, १९४२/बी, शशीप्रभु मार्ग, रूपाणी, भावनगर-३६४००१
प्रकाशन अवधि	: मासिक
मुद्रक	: अजय ऑफसेट, १५/सी बंसीधर मिल कम्पाउन्ड, बारडोलपुरा, अहमदाबाद-३८०००४
प्रकाशकका नाम	: श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट, १९४२/बी, शशीप्रभु मार्ग, रूपाणी, भावनगर-३६४००१
संपादकका नाम	: श्री नीरव वोरा,(भारतीय), १९४२/बी, शशीप्रभु मार्ग, रूपाणी, भावनगर-३६४००१
स्वामित्व	: श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट, १९४२/बी, शशीप्रभु मार्ग, रूपाणी, भावनगर-३६४००१

मैं, नीरव वोरा, एतद द्वारा घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकृत जानकारी और विश्वास अनुसार उपरोक्त विवरण सत्य है।

ता. ३१ मार्च, २०२६ नीरव वोरा

मेनेजिंग ट्रस्टी-श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट

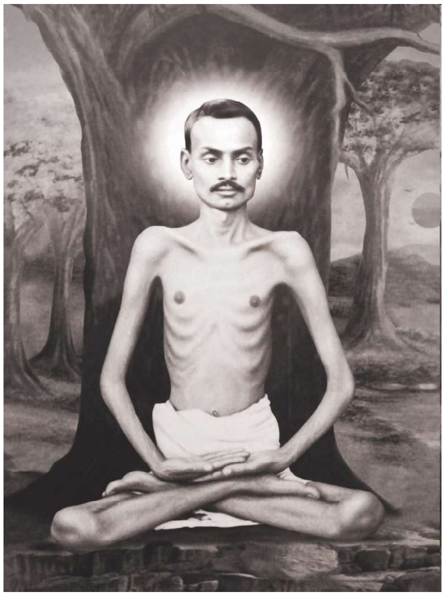

परम कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजीके समाधिदिन के उपलक्ष्यमें... (चैत्र वदि पांचम– ०७/०४/२६)

आज श्रीमद् राजचंद्रजीका स्वर्गारोहणका दिन है। १९५७ चैत्र वद पांचम। मनुष्य पर्यायका त्यागकर देवपर्यायको अवधारण किया। दस वर्षके साधक जीवनमें अनन्त भवभ्रमणका नाशकर केवल एक भव जिनका शेष बचा है, अगले भवमें मनुष्य होकर चरमशरीरी अवस्थामें निर्वाणदशाको प्राप्त होंगे। उनका जो स्वरूप प्रत्ययी पुरुषार्थ और जो अंतरंग ज्ञानदशा है वह बहुत अद्भुत है। जिसका बहुत सूक्ष्मतासे स्वाध्याय करने पर तत्त्वदृष्टि प्राप्त हो ऐसा प्रकार है। भले ही वह पर्याय संबंधित विषय है फिर भी जिस पर्यायमें स्वभाव प्रकट होता है अर्थात् जो पर्याय व्यक्त स्वभावाकार प्रगट हो, वह पर्याय भी (अन्यको) स्वभावदृष्टिका निमित्त होती है। दूसरे को वह स्वभावदृष्टिका निमित्त बनता है। ऐसी दृष्टि द्वारा उनका जो अंतरंग जीवन है उसका अवलोकन करने जैसा है। वे स्वयंका तो पर्याप्त कार्य कर गये, परन्तु दूसरे अनेक जीवोंके लिये शब्ददेह छोड़ते गये, अक्षरदेह छोड़ते गये। उनकी देह तो पंचमहाभूतमें विलीन हो गई, परन्तु अक्षरदेह छोड़ गये हैं। जो अक्षरदेह सैंकड़ों, हज़ारों साल रहेगा। वर्तमानमें जो प्रिन्टिंगकी सुविधा उपलबध है, इसे देखते हुऐ हज़ारों साल तक उनकी (वाणी)... क्योंकि पुस्तककी तो इतनी आयु नहीं होती, एक ही पुस्तक तो इतने लंबे समय तक टिक नहीं सकता, किन्तु उत्तरोत्तर इसकी प्रतिकृति होती जायेगी, इस अपेक्षा ये अक्षरदेह विद्यमान रहेगा। कितने ही भव्य आत्माओंका अनेक भव्य आत्माएँ अपना हित कर लेंगे। जिनकी पात्रता होगी, जिनकी भवितव्यताका परिपाक समीप होगा – नज़दीक होगा ऐसे जीव काम कर लेंगे। और उन जीवोंको मूलमार्ग प्राप्त होनेमें वे निमित्तभूत होंगे। उनके पत्रोंका, उनके वचनोंका, उनके वचनामृतोंका स्वाध्याय करना भी उनके प्रति बहुमान है, उनके प्रति भक्ति है। आत्महितार्थ ऐसे वचनामृतोंको अंगीकृत करना वह उनके प्रति परम भक्ति है।

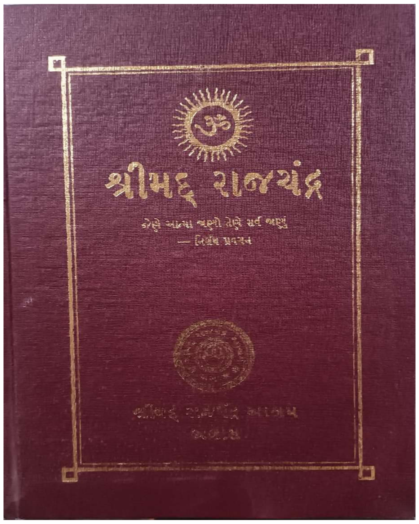

(परम कृपालुदेवके समाधिदिन पर पूज्य भाईश्रीके हृदयोद्गार...)

(‘श्रीमद् राजचंद्र’ प्रवचन नं–१४७में से)

विश्वविभूतिका महाप्रयाण

परम उपकारी पूज्य भाईश्री शशीभाई समाधिदिन
(चैत्र सुदी पांचम–२३–०३–२०२६)

... कुछएक ज्ञानी तो निर्विकल्प दशामें देहत्याग करते हैं। शरीर स्वास्थ्यकी गड़बड़ीका पता चल जाता है कि, अब देहत्यागका क्षण नज़दीक है तो त्वरासे अपने ध्रुव आत्मामें इनका उपयोग सहज ही स्थिर हो जाता है। इतना पुरुषार्थ वेग पकड़ता है! सहज धारा तो चल ही रही होती है परन्तु पुरुषार्थमें तब ऐसी उग्रता आती है कि, एकतरफ देहत्यागकी घड़ी तो Xÿ ar A ma M\/¶g¶© rd g o^ r {^ Þ hmO\Vmh¡! ! प्राण त्याग होनेका पता ही नहीं रहता कि, यह देह है कि छूट गया! निर्विकल्प उपयोगकी स्थितिमें देहत्याग हो जाता है, समाधि मरण पूर्वक देवलोकमें चले जाते हैं, वहाँ उत्पत्तिके साथ ही उन्हें अखंड जागृतिके कारण ख़याल आ जाता है कि मेरी मौजूदगीमें किंचित फ़र्क नहीं पड़ा। ज्ञानधारा कायम रहती है उन्हें भी समाधिमरण है और ज्ञानदशा सहित देहत्याग होते समय भी वे आत्मभान सहित होते हैं। शरीरका सम्बन्ध छूट गया परन्तु मेरी आत्मा अखंडानंद है ज्ञानानंद अखंडस्वरूप है। मेरे स्वरूपमें कोई हानि नहीं हुई। मैं हूँ, मैं मौजूद हूँ, मेरे अस्तित्वका मैं अनुभव कर रहा हूँ। जहाँ भी उत्पत्ति होती है वहाँ जागृतिका भाव अविरतरूपसे रहता है। समाधिमरण पूर्वक देहत्याग करनेवालेका नया जीवन समाधिमय होता है। वहाँ भी सम्यक्ज्ञानरूप समाधि उन्हें कायम रहती है। जो समाधिमय जीवन जीता है उनकी मृत्यु भी समाधिमय, जिनकी मृत्यु समाधिमय होती है उनका नया जीवन भी समाधिमय होता है। जिन्हें कोई आधि–व्याधि–उपाधि नहीं होती उसे कहते हैं समाधि।

(प्रवचनांश... 'बहिनश्रीके वचनामृत' बोल – ३८, 'अध्यात्म सुधा' भाग–२, पन्ना–२७,२८)

'ज्ञानमात्र'

श्री शशीप्रभु समाधि मंदिर

REGISTERED NO. : BVHO - 253 / 2024-2026
RENEWED UPTO : 31/12/2026
R.N.I. NO. : 70640/97
Title Code : GUJHIN00241
Published : 10th of Every month at BHAV.
Posted at 10th of Every month at BHAV. RMS
Total Page : 20

'सत्पुरुषों का योगबल जगत का कल्याण करे'

श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर

भावनगर

स्वत्वाधिकारी श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री नीरव धर्मेन्द्र वोरा द्वारा अजय ऑफसेट, १२-सी, बंसीधर एस्टेट, बारडोलपुरा, अहमदाबाद - ३८० ०१६ से मुद्रित एवं १९४२ - बी, शशीप्रभु मार्ग, रूपाणी, भावनगर - ३६४ ००१ से प्रकाशित ।

संपादक : श्री नीरव धर्मेन्द्र वोरा - 98250 52913

Printed Edition : **3510**
Visit us at : http://www.satshrut.org

If undelivered please return to ...

Shri Shashiprabhu Sadhana Smruti Mandir
1942/B, Shashiprabhu Marg, Rupani,
Bhavnagar - 364 001